हिन्दी भाषा - मेरी पहचान

प्रोफेसर श्रद्धा सिंह
हिन्दी विभाग, काला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

जैसे बिना अभिव्यक्ति के व्यक्ति मूक है वैसे ही बिना अपनी भाषा के कोई भी देश गूंगा है। किसी भी राष्ट्र और उसमें बसने वाले समुदायों की सही पहचान उसकी भाषा व संस्कृति के बिना संभव नहीं है। कल्पना कीजिए कि भारत के सभी प्रदेशों में सब जगह अंग्रेजी फैल जाए, सब अंग्रेजी बोलते मिलें, गांव, कस्बे शहर, स्कूल, बाजार, घर, परिवार, मोहल्ला सब जगह केवल अंग्रेजी हो जाएं तो यह देखकर क्या किसी भारत का अहसास होगा? क्या इससे भारतीय संस्कृति का अहसास होगा? बिलकुल भी नहीं। इससे धीरे-धीरे भारतीयता व भारतीय संस्कृति के विलोपन का एहसास होगा।

हमारे देश पर निस्संदेह रूप से मुगलों का शासन रहा, अंग्रेजो का राज रहा जिसके फलस्वरूप भारत में अरबी-फारसी व अंग्रेजी का बोलबाला बहा। फिर भी, भारत एक ऐसा देश है जिसने अपनी पहचान, अपनी संस्कृति और सभ्यता की पहचान के माध्यम स्वरूप अपनी भाषा को बचाए रखा।

भारत की स्वतंत्रता के लिए अंग्रेज़ों से संघर्ष का प्रारम्भ सन् 1857 से हो चुका था जिसमें उत्तरी भारत से लेकर दिल्ली झांसी तक में हिंसात्मक संघर्ष छिड़ गया था। सब अपने-अपने ढंग से लड़ रहे थे। कोई भावनात्मक स्तर पर अथवा राष्ट्रीय स्तर पर लड़ाई नहीं हुई, और हम असफल रहे। यहीं से राष्ट्रीय स्तर पर भावनात्मक एकता हेतु एक सामान्य भाषा की आवश्यकता को महसूस किया गया और हिंदी की व्यापकता और सरलता के आधार पर निर्णय किया गया कि हिंदी ही सभी को एकता के सूत्र में जोड़ सकती है।

हिंदी ने स्वाधीनता संग्राम की लड़ाई लड़ी है। इसी भाषा में जीने मरने की कसमें खाईं गईं हैं। सबसे ज्यादा स्वतंत्रता के गीत इसी में लिखे गए। गांधीजी के प्रभाव से राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रभाषा पर्यायवाची हो गए। **वंदे मातरम् बंकिम चंद्र, स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है-बालगंगाधर तिलक, इंकलाब जिंदाबाद-भगत सिंह, तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा-सुभाषचंद्र बोस, सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्तां हमारा इकबाल, हिंदी हिंदू हिंदुस्तान भारतेंदु, जय जवान जय किसान- लाल बहादुर शास्त्री इन नारों को देखिए। नारे देने वाले पूरे भारत के प्रतिनिधि हैं, नारों की भाषा हिंदुस्तानी है।**

इसका करण यह है कि **हिंदी हमारे देश की सामान्य भाषा रही है**- भले ही राजनीतिक दृष्टि - से भारत की अखण्डता अभी हाल की बात हो किंतु यहाँ की सांस्कृतिक एकता सदा बनी रही है। जो भाषा थोड़ी बहुत सारे राष्ट्र में बोली और समझी जाती हो, वह अपने इसी गुण से राष्ट्रभाषा बनती है। राष्ट्रभाषा वह होती है जिसके माध्यम से पूरे राष्ट्र के नागरिक आपस में बोलते समझते हैं, सार्वदेशिक स्तर पर साहित्य का सृजन करते हैं। इस दृष्टि से हम देखें तो सैकड़ों वर्षों से जिस किसी का भी भारत में जन-सम्पर्क करने की आवश्यकता हुई. चाहे वह शासक हो या धार्मिक या सामाजिक नेता, चाहे लेखक उसने हिंदी का उपयोग किया। युग युग से तीर्थयात्रियों,

व्यापारियों और कलाकारों की भाषा हिंदी रही है। हिंदी का साहित्य भी सार्वदेशिक है। हिंदी के आदिकाल का सारा साहित्य हिंदी प्रदेश के बाहर रचा गया। नाथ साहित्य पश्चिम में, सिद्ध साहित्य और ब्रजबुलि साहित्य पूर्व में और बहुत सारा भक्ति काव्य महाराष्ट्र और गुजरात में लिखा गया। दक्षिण के आचार्य वल्लभाचार्य, रामानुज, रामानंद आदि इसकी राष्ट्रीय महत्ता को समझकर इसे अपने व्यवहार में लाते रहे। मुस्लिम साम्राज्य के दक्षिण भारत में विस्तार के साथ हिंदी आंध्र, कर्नाटक आदि प्रदेशों में फैली। अलाउद्दीन खिलजी के समय से ही उत्तर के राज्य कर्मचारी, सैनिक और व्यापारी दमिण भारत में फैल गए थे। दक्षिण में राष्ट्रकूटों भार यादवों का जब राज्य स्थापित हुआ, तब वहाँ हिंता का प्रचार हुआ। विजयनगरम् दरबार में हिंदी को विशिष्ट स्थान प्राप्त था। मुहम्मद तुगलको दौलताबाद को पनी राजधानी बनाया था तो अपने साथ ढेर सारी २.गा और जनता व भौं ले गया। एक समय एही राज्र की स्था ना उस्। अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुण्डा और बीदर में अलग-अलग राज्य स्थापित हुए। वे सब दक्खिनी हिंदी के केंद्र बन गए। वहाँ प्रचुर साहित्य लिखा गया। दक्खिनी हिंदी के लेखकों में बंदा निवाज से लेकर मुल्ला वजही, शाह मीराजी, कुली कुतुबशाह तक अनेक नाम गिनाए जा सकते हैं। बंगाल में भक्ति आंदोलन के साथ ही हिंदी का प्रचार प्रसार होने लगा था। राजा राम मोहन रॉय, रवीन्द्रनाथ टैगोर, सुनीति कुमार चटर्जी के नाम से कौन परिचित नहीं है? कलकत्ता में बहुत भारी अनुपात में मजदूर और व्यापारी हिंदी क्षेत्रों से जाते है। हिंदी के पहले पहल प्रकाशित होने वाले पत्र कलकत्ता से ही निकले। भारत में सबसे पहले कलकत्ता विश्वविद्याालय में हिंदी को एम.ए. पाठ्यक्रम में स्थान मिला। कोलकाता में हिंदी पत्रकारिता का जन्म हुआ। 'मतवाला' के प्रकाशन का मकसद निराला की कविताओं और पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र के गद्य को प्रकाश में लाना था। समूचे देश में एक लिपि विस्तार योजना के मकसद से जस्टिस शारदा चरण मित्र ने 1907 में देवनागर पत्र निकाला।

हिंदी अध्यापन की शुरुआत **कलकत्ता के फोर्ट विलियम कॉलेज से हुई** और खड़ी बोली गद्य की नींव वहीं पड़ी।

मोटूरि सत्यनारायण (आंध्रप्रदेश) तो दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार आंदोलन के संगठक थे, उनको तो दक्षिण भारत का राजर्षि टंडन कहा जाता था। हिंदी को राजभाषा घोषित कराने, तथा हिंदी के राजभाषा स्वरूप को निर्धारित कराने वाले दक्षिण भारत के सर्वाधिक महत्वपूर्ण व्यक्तियों में से एक थे। वे दक्षिण हिंदी प्रचार सभा, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान के निर्माता थे। 1972 में प्रयोजनमूलक हिंदी की संकल्पना इनकी ही देन है।

देश की राजनैतिक और सांस्कृतिक एकता के लिए राजा राम मोहन राय, केशवचंद्र सेन, दयानंद सरस्वती से लेकर एनी बेसेंट तक ने हिंदी की ताकत और सरलता को समझकर हिंदी में ही पूरे देश को भावात्मक एकता में बांधने का प्रयास शुरू किया। इसी तरह कन्हैयालाल माणिक लाल मुंशी, राजगोपालाचारी, टी. विजयराघवाचार्य, सी. पी. रामास्वामी अय्यर, कृष्ण स्वामी अय्यर, अनंत शयनम् आयंगर, एस. निजलिंगपा, रंगनाथ रामचंद्र दिवाकर, के. भाष्यम्, टी. आर. वेंकेटरमन शास्त्री, एन सुंदरैया आदि विचारकों व नेताओं ने हिंदी के पक्ष में तर्क दिए।

लाला लाजपतराय ने हिंदी के बहुत से प्रचारक तैयार किए। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन के प्रयत्नों से हिंदी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई।

कलकत्ते से 'भारत मित्र के सम्पादकों- बाबूराव विष्णुराव पराड़कर, अम्बिका प्रसाद बाजपेयी और लक्ष्मी नारायण गर्दे ने राष्ट्रभाषा के प्रचार के साथ राष्ट्रीयता का भी प्रचार किया। भारतेंद् प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बाल मुकुंद गुप्त ने अपनी लेखनी में भारत देश के प्रति होने वाले अत्याचारों और आर्थिक शोषण से तिलमिलाती हुई जनता के आक्रोश को मुखरित किया।

इलाहाबाद से प्रकाशित सरस्वती पत्रिका ने हिंदी को समृद्ध करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। अन्य पत्रिकाओं में माधुरी, सुधा, वीणा, प्रभा, चाँद आदि पत्रिकाओं ने भी स्वाधीनता आंदोलन में योगदान किया। मालवीय जी की 'अभ्युदय', बाल गंगाधर तिलक की 'केसरी', गांधीजी की नवजीवन' आचार्य नरेंद्रदेव की संघर्ष', गणेश शंकर विद्यार्थी और बाल कृष्ण शर्मा नवीन की 'प्रताप' के माध्यन से राष्ट्रीय संघर्ष को बल मिला। मैथिलीशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा नवीन, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि ने राष्ट्रभावना से ओतप्रोत जितनी रचनाएं लिखीं उतनी शायद किसी और भाषा में इतने व्यापक रूप से नहीं लिखी गईं।

यहाँ तक कि उस समय अंग्रेजो ने भी अनुभव किया कि जनसाधारण तक पहुंचने के लिए हिंदी ही एकमात्र साधन है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सिक्के और आदेश हिंदी में छपते थे। बहुत से सरकारी कार्य भी हिंदी में ही होते थे ताकि हिंदुस्तानियों तक आसानी से संप्रेषित हो जाए। मद्रास के लेफ्टिनेंट टॉम रोबक ने हिंदुस्तानी को हिंदुस्तान की महाभाषा कहा और अपने शिक्षा गुरु न लिद इट से कहा-" भारत के जिल भाग मैं भी मुझ, क.नं करना पड़ा है, कलकत्ते से लेकर लाहौर तक, कुमायूं के पहाड़ों से लेकर नर्मदा तक, अफगानों राजपूतों, मराठों, जाटों, लिखों और उन प्रदेशों के सभी कबीलों में, जहाँ मैंने थत्रा की मैंने उस भाषा का आम व्यवहार देखा है, जिसकी आपने मुझे शिक्षा दी है। मैं कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक या जावा से लेकर सिंधु के मुहाने तक इस विश्वास से यात्रा करने की हिम्मत कर सकता हूँ कि मुझे हर जगह ऐसे लोग मिल जाएंगे जो हिंदुस्तानी बोल लेते होंगे।" गांधी जी ने इसी हिंदुस्तानी भाषा का समर्थन किया। गांधी अपनी प्रार्थना सभाओं में सरल हिंदी भाषा में लिखी प्रार्थनायें दोहराते थे। कभी सूरदास, कभी मीरा, कभी कबीर, कभी तुलसीदास, तो कभी नरसी मेहता के भजन गाया करते थे। साधो मन का मान त्यागो, मों सम कौन कुटिल खल कामी वैष्णव जन तो तेणे कहिए / हरि तुम हरो जन की भीर, / इस तन-धन की कौन बड़ाई, सबसे ऊँची प्रेम सगाई/पानी में मीन पियासी रे, मोहिं सुन-सुन आवे हांसी, जैसे भजन। हम जानते हैं कि सहज सरल भाषा में लिखी गई प्रार्थनाओं का अपना असर होता

इस तरह, हम देख सकते हैं कि 1857 के विद्रोह के उपरांत देश में अंग्रेज़ों के विरुद्ध जो बदले की भावना तीव्र रूप में उठी उसने राष्ट्रभाषा की चेतना को जाग्रत किया और हिंदी नाना भाषाभाषियों के बीच संयोग सूत्र बन गई। हिंदी के माध्यम से ही राष्ट्रीय स्वाधीनता की चेतना का प्रसार हुआ।

दूसरी तरफ, आज स्वतंत्रता प्राप्ति के पचहत्तर वर्ष हो चुके हैं हम स्वंतत्रता का अमृत महोत्सव मना रहे हैं। लेकिन आज भी हिंदी को राष्ट्रभाषा की प्रतिष्ठा नहीं मिली। स्वतंत्रता मिलते ही मानो राष्ट्रभाषा का उद्देश्य समाप्त हो गया। राजनीति ने जोर पकड़ा। प्रादेशिकता प्रबल हुई। भाषावार प्रांत बन गए। हम एक राष्ट्रभाषा की जरूरत को भूल गए। राष्ट्रीयता की भावना को भूल गए। अंग्रेजों की दासता से तो मुक्त हो गए किंतु मानसिक दासता से नहीं मुक्त हो सके। अंग्रेजी आज भी हमारी पराधीनता के अवशेष के रूप में विद्यमान है। जिसके कारण कहीं न कहीं वैश्विक स्तर पर हमारी सांस्कृतिक सम्पदा पर प्रश्न चिह्न भी खड़े हो जाते हैं। अंग्रेजी पढ़ना बुरा नहीं है उसको गौरव और गर्व की भाषा मानना बुरा है। हिंदी बोलने वाले को कमतर मानना बुरा है। अहिंदी भाषियों को उकसाया जाना बुरा

है। भाषा के आधार पर राजनीति करना बुरा है। बाइबिल में बेबीलोनिया के मीनार की कथा आती है कि आदम के बेटों ने आसमान तक पहुंचने के लिये एक बहुत बड़ा मीनार बनाना चाहा। ईश्वर ने देखा कि ये लोग स्वर्ग तक पहुंच कर मेरी बराबरी करने लगेंगे। इन लोगों की भाषा एक थी और वे मिलकर काम करते ऊपर चढ़ते चले जा रहे थे। ईश्वर ने अब इन्हें भिन्न भिन्न भाषायें देकर तितर बितर कर दिया। भाषा की विभिन्नता के कारण अब ये एक-दूसरे की बात ही नहीं समझ सकते थे। वे आपस में लड़ने लगे। झगड़े में मीनार भी टूट फूट गया। कहने का अर्थ है कि जिस देश के लोग एक भाषा के सूत्र में बने रहते है उनके विचारों और भावों में एक रूपता रहती है। भाषा के विभिन्नता के कारण राजनीतिक अथवा स'स्कृतिक एकता जागृत नहीं हो सकती।

राष्ट्रभाषा की आवश्यकता

पूरे देश की एक राष्ट्रभाषा का होना पूरे देश को एक सूत्र में बांधता है। वरना बेबल का मीनार बनाने वालों की-सी दुर्दशा हमारी होगी। राष्ट्रभाषा से राष्ट्रीय भावना दृढ़ होती है। राष्ट्रभाषा की सुरक्षा सीमाओं की रक्षा से भी ज्यादा आवश्यक है। क्योकि वह विदेशी आक्रमण को रोकने में पर्वतों और नदियों से भी अधिक समर्थ हैं।

प्रत्येक समुन्नत, स्वतंत्र, स्वाभिमानी देश की अपनी राष्ट्र भाषा है। इग्लैंड, रूस, चीन, जापान सभी देशों में व्यापव बहुप्रचलित भाषा राष्ट्र भाषा के रूप में प्रयोग की जाती है। आयरलैण्ड के पुनर्जागरण के साथ ही गैरिक भाषा को पुनर्जीवित करने का तीव्र प्रयत्न न 'कया जाता तो राजनीति चेतना का विकास न हो पाता। परतंत्रता के कः ण गैलीक भाषा का ज्ञान लुप्त प्राय हो गया था। ई पीढ़ी के युवक तो बिल्कुल नहीं जानते थे जं. जानते थे वो बोलने में लजाते थे। तब वहीं अग्रणी देता डी. वेलेरा ने ए सी वर्ष बूढ़ोधी गैलीक भाषा भी क्योंकि कहते थे, मैं अमके पर स्वाधीनता करू व और उन्हों। यह कर दिखागा। देखते देखते सोई भाषा जान गयी और सारे देश में पफैल गयी। आगरलैण्ड ब्रिटिश साम्राज्य की आजादी ने आजाद हो गया। जब सन 1815 में जर्मनी स्वतुत्र हुआ तो विस्मार्क ने आदेश दिया था कि एक वर्ष के भीतर सभी कर्मचारी अपना-अपना कार्य जर्मन भाषा में करने लगेंगे, जो नहीं करेंगे उन्हें नौकरी से बर्खास्त कर दिया जाएगा। एक वर्ष में ही जर्मन राजभाषा बन गई।

इज़राइल की हिब्रू भाषा जो मृतप्राय थी, इजराइल के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही यहूदियों ने उसे पुनर्जीवित किया और देखते-देखते वहाँ की राजभाषा बन गई, राष्ट्रभाषा बन गई, शिक्षा, विज्ञान, प्रविधि-विधि-शासन सबका माध्यम बन गई।

हिंदी कोई मृत भाषा नहीं थी, अनेक रियासतों की राजभाषा थी, शिक्षा का माध्यम थी, साहित्य लेखन की दृष्टि से भी समृद्ध थी। फिर भी इसे 14 वर्ष के प्रोबेशन पीरीएड में डाल दिया गया जो अभी तक अनवरत चल रहा है बल्कि 1963 और 1967 के अधिनियम के तहत अंग्रेज़ी भाषा को ही राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग में बनाए रखने का नियम पारित हो गया। किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र की राजभाषा कोई विदेशी भाषा नहीं है, भारत ही इसका एकमात्र अपवाद है। यहाँ तक कि हिंदी प्रदेशों में भी सारा काम हिंदी में नहीं होता। हमारे देश के साथ ही श्रीलंका, वर्मा और पाकिस्तान में स्वतंत्र सता की स्थापना हुई इन सभी देशों की अपनी-अपनी भाषा हैं जिसमें सबका कार्य-व्यवहार होता है। ।

सन् 1835 में लार्ड मैकाले ने कहा था कि सब लोग इस बात से सहमत हैं कि भारत में नेटिव जो बोलियाँ बोलते हैं, उनमें साहित्यिक और वैज्ञानिक जानकारी की बातें नहीं हैं। ये इतनी दरिद्र और अनगढ़ है कि जब तक उन्हें

किसी दिशा में समृद्ध न किया जाए उनमें किसी महत्वपूर्ण ग्रंथ का अनुवाद करना भी संभव न होगा। सन् 1835 में दिए गए अंग्रेज शासको द्वारा दिया गया बयान अनुवाद डलहौजी और कर्जन से होता हुआ नेहरू तक पहुंचा और आज भी अपना प्रभाव बनाए हुए है। पहले राजभाषा के रूप में हिंदी को पंद्रह वर्ष के प्रोबेशन पीरीएड में रख दिया गया फिर 1963 तथा 1967 में राजभाषा अधिनियम द्वारा अंग्रेजी को भारत की राजभाषा बना दिया गया। थोड़े से अंग्रेजीदां लोगों के हित के लिए सर्वसाधारण को किनारे कर दिया गया। गांधी जी के वचन को गांधी के चेलों ने ही भुला दिया। गांधीजी ने कहा था कि 'अंग्रेजी के व्यामोह से पिंड छुड़ाना स्वराज का अनिवार्य अंग है।... मैं यदि तानाशाह होता तो आज ही विदेशी भाषा में शिक्षा देना बंद कर देता, सारे अध्यापकों को स्वदेशी भाषाएं अपनाने को मजबूर कर देता। जो आनाकानी करते उन्हें बर्खास्त कर देता..... मेरी मातृभाषा में कितनी ही खामियाँ क्यों न हों, मैं इससे इसी तरह चिपटा रहूँगा जिस तरह बच्चा अपनी माँ की छाती से।" गांधीजी के ये सारे भाव तिराहित कर दिए गए और हम हिंदी को छोड़कर अंग्रेजी से चिपक गए।

अगर सारे देश के विभिन्न राज्यों में अपनी-अपनी भाषा में ही काम हो लेकिन पूरे देश के लिए एक सामान्य भाषा का प्रयोग हो तभी उम भावात्मद, रूप से एकजुट हो सकते हैं। 1963 और 1967 के अधिनियम को निरस्त करके उसमें सुधार किया जा सकता है। राजकर्मचारियों के लिए हिंदी शिक्षण अनिवार्य है, हिंदी सीखने पर उन्हें छुट्टी मिलती है भत्ते और पुरस्कार मिलते हैं, वेतन वृद्धि भी होती है, परंतु वे काम अंग्रजी में ही करते हैं। राष्ट्रपति का आदेश है कि यदि कि यदि कोई कर्मचारी हिंदी में काम न करे तो उसका अहित नहीं होगा। आदेश यह होना चाहिए कि हिंदी प्रशिक्षण पाने के बाद भी यदि कोई कर्मचारी हिंदी में काम नहीं करेगा तो उसे दण्डित किया जाएगा, उसकी वेतन वृद्धि रोक दी जाएगी। कम से कम हिंदी प्रदेश के सभी राज्यों में तो सारा काम हिंदी में ही हाना चाहिए।

आज बाजार तो हिंदी और भारतीय भाषाओं में विस्तार पा रहा है, लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय भाषाएं सिकुड़ती जा रहीं है। उच्च शिक्षा से लेकर माध्यमिक और प्राथमिक शिक्षा तक के क्षेत्र में हिदी एवं अन्य भारतीय भाषाएं उपेक्षणीय हो गई है। आजादी के बाद जिस हिंदी को सम्पर्क भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा के .प में प्रतिष्ठित होने का संकल्प लिया गया था. वह अब भी अधूरा है। * सामान्यतः देखा जाता है कि जो भाषा बाजार में चलती है, वही अंततः राजभाषा का सम्मान पाती है. समाज में समादृत भी होती है। किंतु हिंदी के साथ इसका उल्टा हो रहा है। आज विशाल बाजार कं चलते-दिरी अर्जि भाषा के रूप लग तेरह हजार मिःजन लोगों द्वारा अपनाई चुर्कः है। हिंदी के रुनाचार पत्रों के वितरण की संख्या अभूतपूर्व है। टीर्व रोडेयो सिनेभा तथा विज्ञापनों ने हिंदी को काफी बढ़ावा किया है। समाज के संचालन और राजकाज की भाषा के रूप में हिंदी और अन्य "भारतीय भाषाओं की भूमिका सीमित है। भारत एक बहुभाषी देश है जहाँ संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज 22 भाषाओं के अलावा भी अनेक भाषाओं का प्रयोग होता है, तमाम समृद्ध बोलिया हैं, जिन्हें बोली न कहकर भाषा ही कहा जा सकता है- ये सारी भाषाएँ मिलजुलकर भारतीयता के हक में बड़े प्रमाण मण्डल का निर्माण करती है। सभी भारतीय भाषाओं में एक पूरकता है जिससे भारतीय संस्कृति का निर्माण होता है। भारत विविधिता में एकता के लिए जाना जाता है। अनेकता में एकता इसकी मूल पहचान हैं। अनेकता में एकता की इस पहचान को हमें भाषा के क्षेत्र में भी लागू करने का प्रयास करना चाहिए।

देश में अंग्रेजी बोलने वालों की संख्या भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किसी भी भाषा से कम है। बावजूद इसके वह अब भी पूरे भारत वर्ष में राजकाज की भाषा बनी हुई है। है। अंग्रेजों की डालो की नीति के कारण भारतीय भाषाओं के बीच की समरसता और बहुभाषिकता की स्वीकृति में रार पड़ गई जबकि भाषा संस्कृति के निर्माण, बलिदान, स्वाभिमान और जीवन का साधन रही हैं हम आज भी उसे ज्ञान के विस्तार और ज्ञान की निर्मिति के साधन के रूप में देख सकते हैं। हालांकि संसद की चर्चा का अधिकांश हिस्सा हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में ही होता है पर कार्यपालिका और न्यायपालिका में आज भी हिंदी व अन्य भारतीय भाषाएं जगह पाने के लिए संघर्ष कर रहीं हैं। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी यही स्थिति है। इस देश के भाषाई कुलीन शिक्षकों ने हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाए जाने में आवरोध पैदा किए हैं। तर्क है कि हमारी भाषा में सामग्री नहीं है। सामग्री लाएगा कौन ? शिक्षक और शोधकर्ता ही न। यहाँ यह जानना रोचक होगा कि भारतेंदु और द्विवेदी युगीन लेखकों और संपादकों ने हिंदी में पर्याप्त वैज्ञानिक लेखन भी किया। पं. बालकृष्ण भट्ट, पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी, पं. चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी और पं. रामचंद्र शुक्ल, जैसे साहित्यकारों ने वैज्ञानिक विषयों पर भी अत्यंत सहज ढंग से लिखा और इस क्रम में अनेकानेक वैज्ञानिक शब्दावली और अभिव्यक्तियों का निर्माण किया।

इलाहाबाद में १६१३ में स्थापित विज्ञान परिषद ने १६१४ में 'विज्ञान पत्रिका आरंभ की और वैज्ञानिक लेखन के लिए नए आयाम खोले। रामचंद्र शुक्ल ने हैकल के 'रिडल ऑफ द युनिवर्स का अनुवाद विश्व प्रपंच के नाम से किया और इसकी लम्बी चौड़ी भूमिका लिखी। इस भूमिका के माध्यम से शुक्ल जी ने विज्ञान को हिंदी में प्रस्तुत किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सम्पत्ति शास्त्र नामक अर्थशास्त्र की पुस्तक लिखका अंग्रेजो की लूट का पर्दाफाश किया। गुणाकर मूले ने हिंदी में विज्ञान लेखन को प्रतिष्ठा दी। भास्कराचार्य या भास्कर द्वितीय (1114-1185) प्राचीन भारत के एक प्रसिद्ध गणितज्ञ एवं ज्यातिषी थे। इनके द्वारा रचित ग्रंथ है- 'सिद्धांत शिरोमणि जिसमें लीलावती, बीजगणित, ग्रह गणित और गोलाध्याय नामक चार भाग है जो क्रमशः अंक गणित, बीजगणित, ग्रहों की गति और गोले से संबंधित है। आधुनिक युग में धरती की गुरुत्वाकर्षण शक्ति की खोज का श्रेय न्यूटन को दिया जाता है। किंतु बहुत कम लोग जानते हैं कि गुरुत्वाकर्षण का रहस्य न्यूटन से भी अनेक सदियों पहले भास्कराचार्य ने उजागर कर दिया था।

आज जरूरत है कि हम विधि, विज्ञान, वाणिज्य और नवीनतम प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सरल हिंदी में पाठ सामग्री उपलब्ध कराने में तेजी लाएं। यह तभी संभव है जब उच्च शिक्षा से जुड़े लोगों में दायित्व बोध होगा। नयी शिक्षा नीति से काफी कुछ उम्मीदें हैं जिसमें मैकाले को खारिज करते हुए भारत की जबान में शिक्षा को प्राथमिकता दी जा रही है। निश्चित ही मातृभाषाओं को सम्मान दिए जाने पर ही हम औपनिवेशिक दासता से मुक्ति पा सकते हैं और सही मायने में हिंद स्वराज को साकार कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ-

1-भाषाई अस्मिता और हिन्दी, डॉ रवींद्रनाथ श्रीवास्त५. वाणी प्रकाशन 2- राष्ट्र क हिन्दी समस्याएं और सनाथान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, भारती प्रकाशन ।

2- राष्ट्रभाषा हिन्दी समस्याएँ और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, लोकभारती प्रकाशन ।

3- हिन्दी भाषा, डॉ हरदेव बाहरी, अभिव्यक्ति प्रकाशन।